"भारत माँ के सच्चे सपूत"

शशि कुमार सैनी
रुड़की,

वासुदेव बलवंत फड़के

बात 1870 की है। एक युवक तेजी से अपने गांव की ओर भागा जा रहा था। उसके मुँह से माँ–माँ शब्द निकल रहे थे, पर दुर्भाग्य कि उसे माँ के दर्शन नहीं हो सके। उसका मन रो उठा। लानत है ऐसी नौकरी पर, जो उसे अपनी माँ के अन्तिम दर्शन के लिए भी छुट्टी नही मिल सकी।

वह युवक था वासुदेव बलवंत फड़के। लोगों के बहुत समझाने पर वह शान्त हुआ, पर माँ के वार्षिक श्राद्व के समय फिर यही तमाशा हुआ और उसे अवकाश नहीं मिला। अब तो उनका मन विद्रोह कर उठा। उनका जन्म 4 नवंबर, 1845 को ग्राम शिरढ़ोण (पुणे) में हुआ था। उनके पूर्वज शिवाजी की सेना में किलेदार थे, पर इन दिनों वे सब किले अग्रेंजों के अधीन थे।

छोटी अवस्था में ही वासुदेव का विवाह हो गया। शिक्षा पूर्ण कर उन्हें सरकारी नौकरी मिल गयी, पर स्वाभिमानी होने के कारण वे कहीं लम्बे समय तक टिकते नहीं थे। महादेव गोविन्द रानाडे तथा गणेश वासुदेव जोशी जैसे देशभक्तों के सम्पर्क में आकर फड़के ने "स्वदेशी" का व्रत लिया और पुणे में जोशीले भाषण देने लगे।

1876–77 में महाराष्ट्र में भीषण अकाल और महामारी का प्रकोप हुआ। शासन की उदासी देखकर उनका मन व्यग्र हो उठा। अब शान्त बैठना असम्भव था। उन्होंने पुणे के युवकों को एकत्र किया और उन्हें सह्याद्रि की पहाड़ियों पर छापामार युद्ध का अभ्यास कराने लगे। हाथ में अन्न लेकर ये युवक दत्तात्रेय भगवान की मूर्ति के सम्मुख स्वतन्त्रता की प्रतिज्ञा लेते थे।

वासुदेव के कार्य की तथाकथित बड़े लोगों ने उपेक्षा की, पर पिछड़ी जाति के युवक उनके साथ समर्पित भाव से जुड़ गये। ये लोग पहले शिवाजी के दुर्गो के रक्षक होते थे, पर अब खाली होने के कारण चोरी–चकारी करने लगे थे। मजबूत टोली बन जाने के बाद फड़के एक दिन अचानक घर पहुंचे और पत्नी को अपने लक्ष्य के बारे में बताकर उससे सदा के लिए विदा ले ली।

स्वराज के लिए पहली आवश्यकता शस्त्रों की थी। अतः वासुदेव ने सेठों और जमींदारों के घर पर धावा मारकर धन लूट लिया। वे कहते थे कि हम डाकू नहीं है। जैसे ही स्वराज प्राप्त होगा, तुम्हें यह धन ब्याज सहित लौटा देंगें। कुछ समय में ही उनकी प्रसिद्धि सब ओर फैल गयी। लोग उन्हें शिवाजी का अवतार मानने लगे, पर इन गतिविधियो से शासन चौकन्ना हो गया। उसने मेजर डेनियल को पकड़ने का काम सौंपा।

डेनियल ने फड़के को पकड़वाने वाले को 4,000 रू. का पुरस्कार घोषित किया। अगले दिन फड़के ने उसका सिर काटने वाले को 5,000 रू. देने की घोषणा की। एक बार पुलिस ने उन्हें जंगल में घेर लिया, पर वे बच निकले। अब वे आन्ध्र की ओर निकल गये। वहां भी उन्होंने लोगों को संगठित किया, पर डेनियल उनका पीछा करता रहा अन्ततः वे पकड़ लिये गये।

उन्हें आजीवन कारावास की सजा देकर अदन भेज दिया गया। मातृभूमि की कुछ मिट्टी अपने साथ लेकर वे जहाज पर बैठ गये। जेल में अमानवीय उत्पीड़न के बाद भी उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। एक रात वे दीवार फाँदकर भाग निकले, पर पुलिस ने उन्हें फिर पकड़ लिया। अब उन पर भीषण अत्याचार होने लगे। उन्हें क्षय रोग हो गया, पर शासन ने दवा का प्रबन्ध नहीं किया।

17 फरवरी, 1883 को इस वीर ने शरीर छोड़ दिया। मृत्यु के समय उनके हाथ में एक पुड़िया मिली, जिसमें भारत भूमि की पवित्र मिट्टी थी।

चम्बल के सन्त सुब्बाराव

कोई समय था, जब चम्बल की पहाड़ियों और घाटियों में डाकुओं का आतंक चरम पर था। ये डाकू स्वंय को बागी कहते थे। हर दिन वहां बन्दूकें गरजती रहती थी। ऐसे में गांधी, विनोबा और जयप्रकाश नारायण से प्रभावित सालिम नंजदुइयाह सुब्बाराव ने स्वयं को इस क्षेत्र में समर्पित कर दिया।

सुब्बाराव का जन्म सात फरवरी 1929 को बंगलौर में हुआ था। इनके पिता श्री नंजदुइयाह एक वकील थे, पर वे झूठे मुकदमें नहीं लड़ते थे। घर में देश प्रेम एवं अध्यात्म की सुगंध व्याप्त थी। इसका प्रभाव बालक सुब्बाराव पर भी पड़ा। 13 वर्ष की अवस्था में जुलूस निकालते हुए ये पकड़े गये, पर छोटे होने के कारण इन्हें छोड़ दिया गया।

इन्हीं दिनों इन्होंने अपने मित्र सुब्रह्माण्यम के घर जाकर सूत कातना और उसी से बने कपड़े पहनना प्रारम्भ कर दिया। कानून की परीक्षा उत्तीर्ण करते ही उन्हें कांग्रेस सेवा दल के संस्थापक डॉ. हर्डीकर का पत्र मिला, जिसमें उनसे दिल्ली में सेवादल का कार्य करने का आग्रह किया गया था।

दिल्ली में सेवा दल का कार्य करते हुए वे कांग्रेस के बड़े नेताओं के सम्पर्क में आये, पर उन्होंने सत्ता की राजनीति से दूर रहकर युवाओं के बीच कार्य करने को प्राथमिकता दी। उन्होंने आजीवन अविवाहित रहने का संकल्प लेकर 'सादा जीवन, उच्च विचार' को अपने जीवन में स्थान दिया।

वे सदा खादी की खाकी निकर तथा कमीज पहनते थे। उनके पास निजी सम्पति के नाम पर खादी के दो थैले रहते थे। एक में कुछ दैनिक उपयोग की वस्तुएं रहती थी तथा दूसरे में एक छोटा टाइपराइटर और कागज। स्वतंत्रता प्राप्ति के कुछ समय बाद ही कांग्रेस अपने पथ से भटक गयी और फिर कांग्रेस सेवा दल भी सत्ता की दलदल में फंस गया। इससे सुब्बाराव का मन खिन्न हो गया। उन्हीं दिनों विनोबा भावे और जयप्रकाश नारायण चम्बल के बागियों के बीच घूमकर उन्हें आत्मसमर्पण के लिए प्रेरित कर रहे थे। सुब्बाराव इस कार्य में उनके साथ लग गये। 14 अप्रैल 1972 को इनके प्रयास रंग लाये, जब 150 से भी अधिक खूंखार दस्युओं ने गांधी जी के चित्र के सामने अपने शस्त्र रख दिये। इसमें सुब्बाराव की मुख्य भूमिका थी, जो 'भाई जी' के नाम से विख्यात हो चुके थे।

सुब्बाराव को युवकों तथा बच्चों के बीच काम करने में आनन्द आता था। वे देशभर में उनके लिए शिविर लगाते थे। उनका मानना था कि नई पीड़ी के सामने यदि आदर्शवादी लोगों की चर्चा हो, तो वे उन जैसे बनने का प्रयास करेंगे, पर दुर्भाग्य से प्रचार माध्यम आज केवल नंगेपन, भ्रष्टाचार और जाति प्रान्त आदि के भेदों को प्रमुखता देते हैं। इससे उन्हें बहुत कष्ट होता था। आगे चलकर बागियों के आत्मसमर्पण का अभियान भी राजनीति की भेंट चढ़ गया, सुब्बाराव ने इससे निराश न होते हुए 27 सितंबर 1970 को चम्बल घाटी के मुरैना जिले में जौरा ग्राम में 'महात्मा गांधी सेवा आश्रम' की स्थापना की। वे उसी को अपना केंद्र बनाकर सेवाकार्यों में जुटे रहे।

सुब्बाराव ने केवल देश में ही नहीं, विदेश में भी युवकों के शिविर लगाये। उन्हें देश–विदेश के सैंकड़ों पुरस्कारों तथा सम्मानों से अलंकृत किया गया। इससे प्राप्त राशि वे सेवा कार्य में ही खर्च करते वे चरैवेति–चरैवेति के उपासक सुब्बाराव अधिक समय कहीं रूकते भी नहीं थे। एक शिविर समाप्त होने पर वे अगले शिविर की तैयारी में लग जाते थे। उनकी मृत्यु 27, अक्टूबर 2021 को जयपुर राजस्थान में हुई।